

अष्ट विधि प्राणायाम

विशेष लेख :- योगीराज अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज



हमने अपने पिछले लेख में प्राणायाम के परिणाम को बतलाने का प्रयास किया था। आशा है कि प्रत्येक पाठक ने उस विषय को पूरी तरह से अपने मन में धारण कर लिया होगा। प्राणायाम के वेत्ता आचार्यों ने अपने अनुभव के आधार पर विविध प्रकार के कुम्भकों का उल्लेख किया है। वे सभी एक कुम्भक ही अनेक भेद हैं। प्राणायाम करने के साथ-साथ एक व्यक्ति को तीनों प्रकार के बन्धों का ज्ञान हो जाना भी बहुत आवश्यक है जिनका हम पिछले लेख में वर्णन कर चुके हैं। जो लोग प्राणायाम करते समय तीन बन्धों को कायदे के अनुसार लगाते हैं उनको ही प्राणायाम सिद्ध हो पाता है। 'हठयोग प्रदीपिका' के रचयिता योगी आत्माराम ने बंध लगाने की विधि का वर्णन निम्नांकित श्लोकों में क्या है :-

पूरकांते तु कर्तव्यो,

बंधो जालंधराभिधः।

कुम्भकान्ते रेचकादौ,

कर्तव्यस्तूडियानकः॥

अर्थात् पूरक करने के बाद जालन्धर बंध को करना चाहिए और कुम्भक के बाद रेचक से पहले उड्डियान बंध लगाना चाहिए।

अधस्तात्कुंचने नाशु,

कंठ संकोचने कुते।

मध्ये पश्चिम तानेन

स्यात्प्राणो ब्रह्मनाडिगः॥

उड्डियान बंध के साथ ही मूल बंध लगा लेना चाहिए। मूल बंध और जालंधर बंध लग जाने के बाद जब मध्य भाग में पश्चिमोत्तान अर्थात् उड्डियान लगाया जाता है तब प्राण वायु ब्रह्म नाड़ी में प्रवेश करता है इन तीनों बन्धों के

बाकायदा अभ्यास कर लेने पर योगी युवा बना रहता है। हठयोग के आचार्यों ने कुम्भक प्राणायाम के आठ विशेष भेद कहे हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं :-

सूर्य भेदन मुज्जायी,

सीत्कारी शीतली तथा।

भस्त्रिका भ्रामरी मूर्च्छा,

प्लाविनीत्यष्टकुम्भकाः॥

अर्थात् सूर्य भेदन, उज्जायी, सीत्कारी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूर्च्छा, प्लावनी, यह आठ प्रकार के कुम्भक कहे गये हैं इनमें से सूर्य भेदन का प्रकार हठयोग प्रदीपिका में इस प्रकार कहा है :-

सूर्य भेदन प्राणायाम

आसने सुखदे योगी,

बद्ध्वा चैवासनं ततः।

दक्षनाड्या समाकृष्य,

वहिस्थं पवनं शनैः॥

आकेशादानखाग्राच्च

निरोधावधि कुम्भयेत्।

ततः शनैः सव्यनाड्या

रेचयेत् पवनं शनैः॥

अर्थात् योगी को चाहिए कि सुखासन पर बैठकर के दक्षिण नासा पुट से शनैः शनैः आवाज करते हुए नासा पुट से प्राण वायु का आकर्षण करें। और कुम्भक करके अपनी धारणा शक्ति से शिर से लेकर पैर तक उस वायु को फैलाकर के रोके और यथा शक्ति कुम्भक का अभ्यास बढ़ा लेने के बाद शनैः शनैः वाम नासा पुट से आवाज करते हुए उस

वायु को छोड़ दे। यही सूर्य-भेदन प्राणायाम कहलाता है। सूर्य भेदन प्राणायाम के जितने भी प्राणायाम किये जाय उपरोक्त विधि से करने चाहिए। इस प्राणायाम के करने से योगी के शरीर में अग्नि तत्व की वृद्धि होती है। वायु और कफ के रोगों का नाश होता है। रक्त के विकार, चर्म रोग, उदर विकार, कृमि रोग आदि-आदि सब वायु एवं वादी के रोग इस प्राणायाम के करने से अवश्य-अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

कपाल शोधनं बात-

दोषधनं कृमि दोषहृत्।

पुनः पुनरिदं कार्यं,

सूर्य भेदन मुत्तमम्॥

अर्थात् यह सूर्य भेदन प्राणायाम कपाल शोधन वात दोष दूर करने वाला कृमि रोग हरने वाला है अतः इसे बार-बार करना चाहिए।

उज्जायी प्राणायाम

मुखं संयम्य नाडीभ्या-

माकृष्य पवनं शनैः।

यथा लगति कंठात्

हृदयावधि सरस्वनम्॥

पूर्ववत्कुंभयेत्प्राणं

रेचयेदिऽयाततः।

श्लेष्म दोषहरं कंठे,

देहानल विवर्धनम्॥

नाडी जलोदरा धातु

गत दोष विनाशम्।

गच्छता तिष्ठता कार्यं

मुज्जायाख्यं तु कुम्भकम्॥

अर्थात् मुख को बन्द करके शनैः शनैः दोनों नासा पुटों से इस प्रकार से प्राणवायु का आकर्षण करें जिससे वह प्राण शब्द करता हुआ हृदय तक पहुँच पावे। इसका प्राणवायु हृदय से नीचे नहीं जाना चाहिए। रेचक में जितना भी हो सके प्राण को शनैः शनैः ही छोड़ना चाहिए। इस प्राणायाम में मनुष्य

जिस समय भी कुम्भक करना प्रारम्भ करें उस समय प्राणवायु को दोनों नासा-पुटों से खींच कर मुख में लाए। मुख से कंठ में फिर हृदय तक ले जाना चाहिए। फिर उसी प्रकार से रेचक में कंठ में फिर मुख से लाकर वाम नासा पुट से शनैः शनैः रेचक करना चाहिये।

उज्जायी प्राणायाम का फल

यह प्राणायाम भी कफ-दोष का निवारक उदर रोग मंदाग्नि आदि-आदि को हटाने वाला है, धातुगत जितने रोग हैं उन्हें और जलोदर आदि रोगों को नष्ट करता है। इस प्राणायाम का साधारण विधि से योगी चलते-फिरते भी अभ्यास कर सकता है।

सीत्कारी प्राणायाम

सीत्का कुर्यात्तथावक्रे

प्राणेनैव विजृम्भिकाम्।

एवमभ्यास योगेन

कामदेवो द्वितीयकः॥

अर्थात् सीत्कारी प्राणायाम करते हुए साधक को चाहिए अपनी जिह्वा को दांतों के बीच रख कर वायु को सीत्कार करते हुए अन्दर को खींचे। फिर शनैः शनैः दोनों नासा पुटों से रेचक कर दे। इस प्राणायाम को करने से साधक का सौन्दर्य अधिक-अधिक बढ़ता है। और निरन्तर अभ्यास से कामदेव सम हो जाता है।

योगिनी चक्र सामान्यः

सृष्टि संहार कारकः।

न क्षुधा न तृषा निद्रा,

नैवालस्यं प्रजायते॥

भवेत्सत्त्वं च देहस्य

सर्वोपद्रव वर्जितः।

अनेन विधिना सत्यं,

योगीन्द्रो भूमिमंडले॥

अर्थात् इस प्राणायाम का अभ्यास करने वाला योगी योगिनी चक्र को वश में करके सृष्टि संहार करने वाला हो

जाता है और उसके शरीर में क्षुधा तृषा एवं आलस्य बिल्कुल नहीं रहता है। इस प्राणायाम के अभ्यास से योगी के शरीर में उत्तरोत्तर बल बढ़ता है। और योगीराज सब प्रकार से ख्याति को प्राप्त करता है।

शीतली प्राणायाम

जिह्वा वायुमाकृष्य

शनकै घ्राणरंध्राभ्यां

रेचयेत्पवनं सुधीः॥

इस प्राणायाम में जिह्वा को काक चोंच की तरह गोलमोड़कर वायु का आकर्षण करना चाहिए और पुनः उपरोक्त विधि के अनुसार कुम्भक करके शनैः शनैः दोनों नासा रंध्रों से वायु को निकाल देना चाहिए। इसी को शीतली प्राणायाम कहते हैं :-

शीतली प्राणायाम का फल

गुल्मप्ली हादिकान् रोगा-

ज्वरं पित्तं क्षुधां तृषाम्।

विषाणि शीतली नाम

कुंभिकेयं निहन्ति हि॥

शीतली प्राणायाम के करने से गुल्म, प्लीहा ज्वर, पित्त, क्षुधा, तृषा और अनेक प्रकार के विषों का नाश करता है :-

भस्त्रिका प्राणायाम

ऊर्वोरुपरि संस्थाप्य

शुभे पादतले उभे।

पद्मासनं भवेदेत-

त्सर्व पाप प्रणाशनम्॥

सभ्यक पद्मासनं बद्ध्वा

समग्रीवोदरं सुधीः।

मुखं संयम्य यत्नेन

घ्राणं घ्राणेन रेचयेत्॥

यथा लगति हृत्कंठे

कपाल वधि सरस्वनम्।

वेगेन पूरयेच्चापि

हृत्पद्मावधि मारुतम्॥

पुनर्विचयेत्तद्वत्पूर-

यथैव लोहाकारेण

भस्त्रा वेगेन चाल्यते॥

अर्थात् भस्त्रिका प्राणायाम के प्रारम्भ में साधक को चाहिए कि वह अपने जंघाओं में पाद तलों को स्थापित करके सभी प्रकार के पाप कर्मों के नाश करने वाले पद्मासन को लगाये। पद्मासन को भली प्रकार लगा करके गर्दन पेट आदि शरीर के सब अंगों को समभाग रख कर और मुख को बन्द करके नासिकारंध्र द्वारा प्राण वायु का रेचन करें। साधक ऐसा प्रयत्न करें कि वह प्राण वायु हृदय कंठ और कपाल पर्यन्त आवाज करती हुई हृदय कमल तक बार-बार जाय। इस प्रकार से एक नासिका रंध्र से पूरक करें और दूसरे से छोड़ दे। बार-बार वेग के साथ अभ्यास करें।

तथैव स्वशरीरस्थं

चालयेत्पवनं धिया।

यदा श्रमो भवेद्देहे

तदा सूर्येण पूरयेत्॥

यथोदरं भवेत्पूर्णमनि-

लेन तथा लघु।

धारयेन्नासिकां मध्य

तर्जनीभ्यां बिना दृढ़ं॥

विधिवत्कुम्भकं कृत्वा

रेचयेद्दिड्याऽनिलम्।

बात पित्तश्लेष्महरं

शरीराग्निं विवर्धनम्॥

अर्थात् शरीरस्थ पवन को इसी भस्त्रिका विधि से चालन करें। जब शरीर में थकावट मालूम पड़े तब सूर्य नाड़ी से पूरक करें। जिस प्रकार पेट में वायु पूरण है। उसे सूर्य नाड़ी से करें। प्रयत्न के साथ एवं यौगिक क्रियाएँ शमन हो, जाया करते हैं।

अभ्यास में लाये इस प्रकार बार-बार कुम्भक करते हुए, इडा नाड़ी से पवन को छोड़ दे। यह भस्त्रिका प्राणायाम वात, कफ का नाश करने वाला शरीराग्नि को बढ़ाने वाला कुण्डलिनी शक्ति का बोधक हृदय के आवरण को दूर करने वाला है। हठाभ्यासी लोग इस भस्त्रिका प्राणायाम का निरन्तर अभ्यास करते हैं। उनके शरीर में रहने वाली पाँचों प्राण वायु शनैः शनैः इकट्ठे होने लगते हैं और पाँचों प्राणवायु के इकट्ठे होने पर उन सब की मिली हुई शक्ति कुण्डलिनी बोध के लिए अति लाभदायक होती है। शक्तिचालिनी मुद्रा बांधकर हठाभ्यासी लोग इसी प्राणायाम के द्वारा कुण्डलिनी जागरण के लिए दृढ़तर अभ्यास किया करते हैं।

भ्रामरी प्राणायाम

वेगादघोषं पूरकं

भृङ्गीनादं, रेचकं मन्दमन्दम्।

योगीन्द्राणामेवमभ्यासयोगा-

च्चित्ते जाता काचिदानन्द लीला॥

भ्रामरी प्राणायाम के अन्दर ये विशेषता है कि ये भ्रमर के मानिन्द आवाज करते हुए वेग के साथ वायु का आकर्षण करें और यथा शक्ति कुम्भक करें और रेचन विधि से रेचन करें। ऐसा करने से नाद के प्रभाव से योगी को एक विशेष आनन्द आने लग जाता है। नाद का उत्पन्न होना लयता का एक उत्कृष्ट साधन है।

मूर्च्छा प्राणायाम

पूरकान्ते गाढतरं बद्ध्वा,

जलंधरं शनैः।

रेचयेन्मूर्च्छनाख्येरयं

मनो मूर्छा सुखप्रदा॥

मूर्च्छा कुम्भक के अन्दर जिस समय मनुष्य प्राणायाम की विधि से हृदय में प्राण को पूरक करें वाद दृढ़ता के साथ जालंधर बंध लगाकर रेचन कर दे। ऐसा करने से स्वभाव से ही मनोमूर्च्छा होने लगती है। और योगी का मन एकाग्र होने लगता है। इस कुम्भक को मूर्च्छा कुम्भक इसलिए कहा गया है कि इसमें मूर्च्छा स्वभाव से ही होती है। और वह योगी के लिए सुखप्रद है।

प्लाविनी प्राणायाम

अन्त प्रतर्तितो दारमारुता,

पूरितोदरः।

पयस्य गाधेऽपि सुखात्प्ल-

बते पद्मपत्रवत्॥

योगी प्राणायाम के बल से अपने पेट में वायु को पूरित करे। ऐसा अभ्यास करने से ज्यों-ज्यों अम्ल बढ़ जायेगा, त्यों-त्यों योगी पद्म पत्र वत् जल में तैरने लगेगा। यह अष्ट विधि प्राणायाम का उल्टा योगियों ने अपने ग्रन्थों में अनुभव के आधार पर अंकित किया है। प्राणायाम के अभ्यासी लोग इनका विधि पूर्वक अभ्यास करें किन्तु यह बहुत आवश्यक है कि अनुभवी गुरु की देखरेख में ही यह सब करें, तभी यह लाभदायक हो सकता है। बिना गुरु के सान्निध्य के पुस्तक या लेखों के आधार पर जो लोग अभ्यास करना आरम्भ करते हैं वह अभ्यास उनके लिए सुख प्रद नहीं रहता। प्रत्युत कहीं-कहीं पर तो इस प्रकार की भूलों से बड़ी भारी हानि दिखाई देती है। और साधक को पश्चात्ताप की अग्नि में जलना पड़ता है। इसलिए प्राणायाम के अभ्यासी को बड़ी सावधानी के साथ इस मार्ग का अभ्यास करना चाहिए।

— भगवान को जो सरल विश्वास के साथ, अन्तःकरण पूर्वक पुकारता हैं, उन्हें छोड़कर और कुछ भी नहीं चाहता, वहीं उन्हें पाता है। और उन्हें पाकर फिर उसे और कुछ चाहने या पाने को रह नहीं जाता। जो इहलौकिक और पारलौकिक सुखों के लिए उन्हें पुकारते हैं या उनसे ऐहिक वस्तु चाहते हैं, उनको दया या इच्छा होने से, यह तो उन्हें मिल सकती है पर वह उन्हें (प्रभु को) नहीं प्राप्त कर सकता।

— शिव संहिता के मतानुसार योग में सिद्धि लाभ करने का प्रथम लक्ष्य है— मैं निश्चय ही सफल होऊँगा यह विश्वास। द्वितीय— श्रद्धा पूर्वक साधन। तृतीय— गुरु पूजा। चतुर्थ— समता। पंचम— इन्द्रिय निग्रह। षष्ठ— परिमित आहार। सप्तम और कुछ भी नहीं। अर्थात् साधक में यही कुछ लक्षण ठीक-ठीक होने से सिद्धि निश्चित है। सभी मुमुक्षुओं के लिए यह प्रयोज्य है।

— श्री रमेश जोहरी।

